7

वीरव्रती स्वतंत्रता-सेनानी

कांग्रेस के अखिल भारतीय अधिवेशन में सक्रिय रहते हुए डॉ. हेडगेवार ने अपने संगठन-कौशल एवं सिद्धांतों की अमिट छाप छोड़कर स्पष्ट कर दिया कि वे देश की स्वतंत्रता के लिए सशस्त्र क्रांति अथवा सत्याग्रह इत्यादि किसी भी मार्ग पर चलने के लिए कटिबद्ध हैं, परंतु असहयोग आंदोलन में कांग्रेस के एक पूर्णकालिक अवैतनिक कार्यकर्ता और निडर नेता के रूप में अपनी सक्रिय भूमिका निभाते हुए उन्होंने एक दिन भी अपनी मूल विचारधारा 'हिंदुत्व' तथा प्रखर राष्ट्रवादी सिद्धांतों से समझौता नहीं किया। एक वर्ष तक कारावास में वीरव्रती जीवन बिताते हुए उन्होंने कई स्वतंत्रता-सेनानी तैयार कर दिए। 'मैं' से ऊपर उठकर 'हम' के सिद्धांत पर चलते हुए डॉक्टरजी ने कांग्रेसी कहलाना भी स्वीकार कर लिया था। उनका अंतिम लक्ष्य 'पूर्ण स्वतंत्रता' था।

भारत में चल रहे सभी प्रकार के स्वतंत्रता-आंदोलनों, सशस्त्र क्रांति के प्रयत्नों, समाज-सुधार के लिए कार्यरत विभिन्न संस्थाओं तथा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के जागरण में जुटी सभी धार्मिक संस्थाओं का बहुत निकट से अध्ययन करने के लिए डॉक्टर साहब इन सभी कार्यकलापों में यथासंभव भागीदारी भी करते थे। कलकत्ते में रहकर अनुशीलन समिति से और अपने ही द्वारा निर्धारित सशस्त्र क्रांति द्वारा महाविप्लव के मार्ग से भी डॉ. हेडगेवार ने ढेरों अनुभव प्राप्त किए। स्वतंत्रता-प्राप्ति का यह प्रयास भले ही सफल न हुआ, परंतु उससे देशभर में अंग्रेजों के खिलाफ जो नफरत पैदा हुई और अनेक युवकों ने भविष्य में भी देश की आजादी के लिए अपना सारा जीवन समर्पित करने का निश्चय किया, यह भी अपने आपमें एक बहुत बड़ी सफलता थी। वास्तव में महाविप्लव के प्रयास का सफल न होना

डॉ. हेडगेवार के लिए तात्कालिक उद्‌देश्य की विफलता थी, उसे डॉक्टर साहब के अंतिम लक्ष्य 'भारत की सर्वांगीण स्वतंत्रता' के लिए संघर्ष की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी कहना ही उचित होगा।

परिस्थितियों का समयोचित बोध

'डॉ. हेडगेवार चरित' के लेखक नारायण हरि पाळकर के शब्दों में—"इस असफलता से डॉक्टर ने तत्कालीन समाज की स्थिति का बहुत ही स्पष्ट एवं सही बोध प्राप्त कर लिया था, उसी के आधार पर अपने अगले पगों की दिशा निश्चित की थी, परंतु सशस्त्र क्रांति पर से उनका विश्वास कदाचित् भी नहीं डिगा था। उनका यह निश्चित मत था कि देश के शत्रुओं को जिस किसी भी मार्ग से इस भूमि से निकाला जा सके, वही उचित तथा योग्य है। हाँ, किसी भी मार्ग पर चलकर सफलता प्राप्त करने के लिए जिस वृत्ति की आवश्यकता होती है, उसका अभाव उन्हें उस समय प्रमुख रूप से दिख रहा था। जिसके पास दृष्टि है, वह बुरे में भी अच्छा खोज लेते हैं।" इसी दृष्टिकोण एवं लक्ष्यप्रेरित मानसिकता के साथ डॉ. हेडगेवार ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्व में संचालित अहिंसावादी आंदोलनों में शामिल होने का निश्चय किया। उनके सामने एकमात्र अंतिम लक्ष्य अपनी मातृभूमि की पूर्ण स्वतंत्रता था शेष सब प्रकार के मार्ग एवं तात्कालिक उद्‌देश्य उनके लिए इसी अंतिम ध्येय के विभिन्न रास्ते थे। यही वजह थी कि कांग्रेस द्वारा प्रायोजित आंदोलनों में पूरी शक्ति के साथ शिरकत करते हुए भी डॉ. हेडगेवार ने क्रांतिकारियों की सब प्रकार की गतिविधियों की जानकारी रखी और इनमें पूरा सहयोग भी करते थे।

नागपुर नेशनल यूनियन की स्थापना

महात्मा गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस ने देशव्यापी स्वरूप अख्तियार कर लिया था। इन दिनों कांग्रेस की महाराष्ट्र इकाई में लोकमान्य तिळक और उनके अनुयायियों का बोलबाला था। डॉक्टर साहब ने कांग्रेस के मंचों से ही सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के जागरण का कार्य बहुत सतर्कता एवं सक्रियता से प्रारंभ कर दिया। कांग्रेस के गरम दल के नेता तथा अनुयायियों द्वारा संचालित एक संस्था 'राष्ट्रीय मंडल' बहुत लोकप्रिय थी। डॉ. हेडगेवार को इस संस्था में प्रवेश देकर उनके जिम्मे कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य भी लगाए गए। अपने संघर्षशील तथा निरंतर कार्य करते रहने के स्वभाव के कारण डॉक्टर साहब ये जिम्मेदारियाँ निभाने में व्यस्त हो गए। यहाँ भी डॉक्टर साहब की देशभक्ती एवं अंग्रेजों का पूर्ण विरोध करनेवाली मानसिकता

प्रकट हुई। राष्ट्रीय मंडल की अंग्रेजों के प्रति नरमी रखनेवाली राजनीतिक सोच को अस्वीकार करते हुए डॉक्टर साहब ने अपने कुछ कांग्रेसी मित्रों को साथ लेकर 'नागपुर नेशनल यूनियन' संस्था की स्थापना की। उन्हें महसूस हुआ कि राष्ट्रीय मंडल का असली उद्‌देश्य 'ब्रिटिश साम्राज्यवाद का विरोध' अब मंद पड़ चुका है। इस संस्था के उग्र अंग्रेज-विरोध के कारण 1909 में सरकार ने इसकी गतिविधियों को प्रतिबंधित कर दिया था, परंतु विश्वयुद्ध के समय इसके द्वारा अंग्रेजों की मदद करने के लिए प्रतिबंध हटा लिया गया।

देखते-ही-देखते राष्ट्रीय मंडल के अनेक महत्त्वपूर्ण कार्यकर्ता तथा नेता नागपुर नेशनल यूनियन में शामिल हो गए। राष्ट्रीय मंडल ने कभी भी 'भारत की पूर्ण स्वतंत्रता' का पक्ष नहीं रखा, बल्कि इस संस्था के सदस्यों ने औपनिवेशिक स्वराज्य का ही राग आलापते हुए अपने अंग्रेजभक्त रुख को बरकरार रखने में ही गनीमत समझी। दूसरी ओर नागपुर नेशनल यूनियन ने सीना तानकर पूरी ताकत के साथ पूर्ण स्वतंत्रता की माँग करते हुए सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का प्रचार-प्रसार युद्धस्तर पर शुरू कर दिया। इसी समय मध्य प्रांत की कांग्रेस समिति द्वारा एक हिंदी-साप्ताहिक पत्र 'संकल्प' प्रारंभ करके डॉ. हेडगेवार को उसका संरक्षक नियुक्त कर दिया। डॉ. हेडगेवार ने इस नई जिम्मेदारी को भी पूरी तन्मयता से निभाया। इसी हेतु अपने महाकौशल के प्रवास के समय अनेक हिंदू युवक उनके संपर्क में आए, जो बाद में संघ-स्थापना के समय सहायक साबित हुए।

राष्ट्रीय उत्सव मंडल का गठन

यह कार्यकाल 1919 का था। नागपुर में रहते हुए डॉ. हेडगेवार ने विद्यार्थियों की सभाओं में देशभक्तिपूर्ण भाषण देने शुरू कर दिए। इन युवा छात्रों के घरों में आना-जाना प्रारंभ करके इनको अपने राष्ट्रीय जागरण के अभियान में भाग लेने की प्रेरणा देना शुरू कर दिया। जब अनेक युवा कुछ करने के लिए तैयार हो गए, तो उनके इस उत्साह को दिशा देने के लिए डॉ. हेडगेवार ने एक और संस्था 'राष्ट्रीय उत्सव मंडल' का गठन किया। वे स्वयं कई वर्षों तक उसके महामंत्री की जिम्मेदारी निभाते रहे। इस संस्था के अनेकविध कार्यक्रमों में छात्रों को हिंदू धर्म, राष्ट्रीय संस्कृति, स्वतंत्रता का महत्त्व तथा ब्रिटिश सरकार के द्वारा हिंदुओं के अस्तित्व को ही मिटा देने के षड्‌यंत्र की जानकारी दी जाती थी। मध्य प्रांत के गण्यमान्य राष्ट्रवादी नेताओं डॉ. मुंजे, लोकमान्य अणे, शरद पेंडसे के भाषण इस संस्था की सभाओं एवं बैठकों में होने लगे। गणेशोत्सव, छत्रपति शिवाजी

का राज्यारोहण-उत्सव, मकर-संक्रांति, शस्त्र-पूजन, आदि हिंदुओं के विभिन्न त्योहारों का आयोजन मंडल के प्रभावशाली कार्यक्रम थे। जैसे-जैसे इस संस्था का विस्तार हो रहा था, वैसे-वैसे नौजवानों की संख्या भी बढ़ने लगी। विभिन्न भाषा तथा मजहबों से जुड़े युवा लोग एक ही मंच पर आकर भारत माता की आराधना करने लगे। सभी सदस्य खुले मन से विचारों का आदान-प्रदान करते हुए राष्ट्रभक्ति के तत्त्वज्ञान में संस्कारित होने लगे और देखते-ही-देखते एक शक्तिशाली संगठन का स्वरूप सामने आना प्रारंभ हो गया।

हिंदू-युवकों के समर्पण, त्याग एवं उत्साह को भाँपकर डॉ. हेडगेवार ने शरद पूर्णिमा की रात्रि को उन्हें अपने घर पर बुलाना प्रारंभ किया। शरद पूर्णिमा की ठंडी रात्रि को लगभग सौ युवकों का एकसाथ आकर राष्ट्रीय विषयों पर भाषण सुनना और चर्चा में खुलकर भाग लेना अत्यंत आनंद का वातावरण बनने में सहायक सिद्ध हुआ। राजा लक्ष्मणराव भोंसले एवं डॉ. मुंजे आदि वृद्ध लोगों का इस प्रकार के कार्यक्रमों में आकर आशीर्वाद देना भाने लगा। इस कार्यक्रम के माध्यम से एकत्र हुए सैकड़ों युवाओं का संबंध डॉक्टर साहब से बनना स्वाभाविक ही था। उनकी दृष्टि तो सदैव इस तरह के सूझ-बूझवाले युवकों को खोजती रहती थी। उनके प्रवचनों, भाषणों और बातचीत में से चढ़ती उमर के जवानों को देश व समाज के लिए कुछ कर गुजरने की तार्किक प्रेरणा मिलती थी। युवा लोग स्वयं आगे होकर डॉक्टर साहब को अपना नेता स्वीकार करते थे। यद्यपि डॉक्टर साहब उस वक्त के प्रचलित नेता न होकर निस्स्वार्थी सखा और मार्गदर्शक ही थे।

कांग्रेस-अधिवेशन में डॉ. हेडगेवार

महात्मा गांधी द्वारा शुरू किए गए देशव्यापी आंदोलन-सत्याग्रह से अंग्रेज-विरोधी वातावरण में तीव्रता बढ़ती जा रही थी। इसी बीच सरकार ने देशभर में 'शांति-दिवस' आयोजन करने का प्रस्ताव पारित करके देशवासियों को शांत रहने की अपील जारी कर दी। डॉ. हेडगेवार और उनके साथियों ने इस अपील को दरकिनार करके उसी दिन 'सरकार का विरोध दिवस' आयोजित करने की अपील जारी कर दी। इस सफल आयोजन के माध्यम से अनेक नए लोग सत्याग्रह से जुड़े, सरकार की अपील बेअसर हो गई और डॉ. हेडगेवार के नेतृत्व-कौशल का परिचय जनता को पता चला। इसी वर्ष वे अमृतसर में आयोजित कांग्रेस के अखिल भारतीय अधिवेशन में भी गए। वहाँ उन्होंने अधिवेशन की संचालन-व्यवस्था और कांग्रेस के नेताओं की कार्य-पद्धति को बहुत ही नजदीक से देखा-परखा। उन्होंने जलियाँवाला

बाग में जाकर उन शहीदों को भी श्रद्धांजलि अर्पित की, जिन्होंने अंग्रेज जनरल डायर द्वारा चलवाई गई अंधाधुंध गोलियों का सामना करते हुए अपने जीवन-पुष्प भारतमाता के श्रीचरणों में चढ़ाए थे। कांग्रेस का यह अधिवेशन दिसंबर, 1919 में हुए जलियाँवाला बाग हत्याकांड के पश्चात् हुआ था। इसमें अंग्रेजों का विरोध मुखर होकर सामने आ गया।

डॉक्टर साहब की दूरदृष्टि

इससे पूर्व महात्मा गांधी ने 24 नवंबर, 1919 को 'खिलाफत आंदोलन' को कांग्रेस का समर्थन देकर हिंदुओं से उसका समर्थन करने की अपील की थी। यह खिलाफत आंदोलन तुर्की के खलीफा के समर्थन तथा ब्रिटिश साम्राज्य के विरोध में था। गांधीजी इसको हिंदू-मुसलमानों का अखिल भारतीय संयुक्त खिलाफत आंदोलन बनाना चाहते थे। डॉ. हेडगेवार के अनुसार तुर्की के मुसलिम समाज से इस आंदोलन का भारत के हिंदुओं-मुसलमानों के साथ कोई संबंध नहीं था। इसका भारत और भारत में स्वतंत्रता आंदोलन के साथ भी कोई लेना-देना नहीं था। गांधीजी ने अपने द्वारा शुरू किए गए असहयोग आंदोलन में मुसलमानों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए यह कदम उठाया था। डॉ. हेडगेवार का विचार सत्य साबित हुआ। आगे चलकर मुसलमानों में अलगाववादी प्रवृत्ति के आधार पर एक अलग राष्ट्र बनाने की माँग तेज हो गई। डॉक्टर साहब हिंदू-मुसलिम एकता के प्रबल समर्थक थे, परंतु देश की अखंडता, सुरक्षा और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को ताक पर रखकर नहीं। एकता के नाम पर समझौतावादी तुष्टीकरण के वे घोर विरोधी थे।

इसी दौरान 1920 में होनेवाले कांग्रेस के अधिवेशन को नागपुर में करने का निश्चय हुआ। उसे सफल बनाने के लिए तैयारियाँ प्रारंभ हो गईं। इसी हेतु कांग्रेस के एक वरिष्ठ नेता डॉ. परांपजे ने डॉ. हेडगेवार की सहायता से जनवरी, 1920 में 'भारत सेवक मंडल' की स्थापना की। सार्वजनिक गतिविधियों को सुचारु ढंग से चलाने के लिए और सेवाभावी युवकों को 'वालंटियर' बनाने के लिए गठित हुए इस भारत सेवक मंडल के सहप्रमुख की जिम्मेदारी डॉ. हेडगेवार को दी गई। उन्हीं के प्रयासों-भागदौड़ के फलस्वरूप इस मंडल में एक हजार से ज्यादा युवकों की भर्ती हो गई। इसी बीच अधिवेशन के प्रचार-प्रसार के लिए जिन समितियों का गठन किया गया, उनमें स्वागत-समिति में डॉ. हेडगेवार को प्रमुख स्थान दिया गया। डॉ. मुंजे, डॉ. परांपजे और डॉ. हेडगेवार द्वारा पूरे मध्य भारत में एक मास तक निरंतर प्रवास पर टिप्पणी करते हुए नागपुर से प्रकाशित 'महाराष्ट्र' समाचार-पत्र ने लिखा था—'जहाँ-

जहाँ दौरा हुआ, वहीं लोगों ने गाँव को सजाकर अतिथियों का स्वागत किया। किसान भाइयों के द्वारा दिखाया गया उत्साह एवं उत्सुकता अपूर्व थी। डॉ. मुंजे, डॉ. हेडगेवार, गणपतिराव जोशी तथा बाबा साहिब देशपांडे के व्याख्यान अति प्रभावित रहे।'

तिलक के निधन पर असहयोग सप्ताह

मध्य प्रांत की जनता और कांग्रेस के प्रांतीय नेता नागपुर में आयोजित होनेवाले अधिवेशन की अध्यक्षता लोकमान्य तिलक से करवाने के लिए उत्सुक थे। तभी 31 जुलाई को इस महबूब नेता का निधन हो गया। नागपुर समेत पूरे मध्य प्रांत में शोक-सभाओं का आयोजन किया गया। डॉ. हेडगेवार और उनके साथियों ने 'नॉन को-ऑपरेशन बोर्ड' शीर्षक से एक पत्रक जारी करके लोगों से 11 से 18 अगस्त तक 'असहयोग-सप्ताह' मनाने की अपील की। यह आयोजन भी बहुत सफल और प्रभावशाली रहा।

लोकमान्य तिळक के निधन के पश्चात् अब नागपुर में होनेवाले कांग्रेस के अधिवेशन के लिए अध्यक्ष का विषय आने लगा। कांग्रेस में इस समय गरम दल अर्थात् राष्ट्रवादियों का वर्चस्व था। वे तिलक की विचारधारावाले किसी नेता को अध्यक्ष बनाने के लिए प्रयासरत हुए। श्रीअरविंद इस समय पांडिचेरी आश्रम में अध्यात्म साधना में व्यस्त थे। डॉ. मुंजे और डॉ. हेडगेवार सितंबर, 1920 को श्रीअरविंद से निवेदन करने के लिए पांडिचेरी गए, परंतु श्रीअरविंद ने राजनीति में लौटने के लिए अपनी असमर्थता प्रकट कर दी। जब डॉक्टरजी नागपुर वापस लौटे, उसी समय नागपुर के विद्यार्थियों ने अपनी एक सभा में 'अखिल भारतीय महाविद्यालयीन विद्यार्थी परिषद्' के गठन का निश्चय किया। डॉ. हेडगेवार के एक परम मित्र राजाभाऊ गोखळे ने उस परिषद् के गठन के लिए अपनी सरकारी नौकरी छोड़कर मध्य प्रांत के बाहर के प्रांतों का दौरा प्रारंभ कर दिया। डॉक्टरजी ने राजाभाऊ गोखले को दिल्ली, कलकत्ता, ढाका, पटना, वाराणसी, प्रयाग आदि स्थानों के लिए परिचय-पत्र दे दिया। डॉक्टर साहिब का प्रभा-मंडल नागपुर के अलावा बाहर के प्रदेशों में भी फैला हुआ था। इसकी जानकारी इन परिचय-पत्रों से मिलती है।

डॉ. हेडगेवार का पूर्ण स्वतंत्रता का प्रस्ताव

दिनांक 26 दिसंबर, 1920 को कांग्रेस का अधिवेशन शुरू हो गया। इससे पूर्व डॉ. हेडगेवार एवं उनके कांग्रेसी मित्रों ने एक प्रस्ताव 'पूर्ण स्वतंत्रता ही हमारा

उद्‌देश्य है' तैयार करके गांधीजी के सामने रखा, परंतु गांधीजी ने विनम्र भाव से इतना ही कहा कि 'स्वराज्य में पूर्ण स्वतंत्रता का समावेश हो जाता है' और प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। इस पर भी डॉक्टरजी तथा उनके साथी उस अधिवेशन की तैयारी एवं व्यवस्था में पूरी शक्ति से रहे। यह अधिवेशन अब तक के हुए अधिवेशनों में सबसे बड़ा था, जिनमें 14,589 प्रतिनिधि, तीन हजार वालंटियर और सात-आठ हजार दर्शक थे। स्वयंसेवकों के प्रमुख के नाते डॉ. हेडगेवार ने थोड़ा समय और अधिक संख्या का ध्यान रखते हुए अति उत्तम व्यवस्था की। डॉक्टर साहिब का सेवाभाव और विनम्रता देखकर सभी प्रतिनिधियों ने उनकी प्रशंसा के पुल बाँध दिए।

इस अधिवेशन में डॉ. हेडगेवार ने अनुभव किया कि सेवाभाव से काम करनेवाला स्वयंसेवक यदि अनुशासित, समर्पित और दृढ मानसिकतावाला नहीं हुआ, तो कभी भी पथ से विचलित होकर अपने ध्येय को छोड़कर भाग सकता है।

नागपुर में संपन्न हुए इस अधिवेशन में तन्मयता के साथ भागीदारी करते हुए उन्हें कांग्रेस की विचारधारा के कई पक्षों के साथ सहमति नहीं हुई। मुसलिम समाज को अपने पक्ष में करने के लिए सनातन सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का संयुक्त आधार तैयार करने के स्थान पर तुष्टीकरण करने की नीति को डॉक्टरजी पचा नहीं सके। उनका स्पष्ट मत था कि इससे पृथकतावाद को बढ़ावा मिलेगा। पूर्ण स्वतंत्रता को स्वराज्य की सीमा में बाँध देना भी दूरदर्शितापूर्ण नहीं था। उसी तरह मुसलिमों के नाराज हो जाने के भय से गोरक्षा जैसे राष्ट्रीय मुद्‌दे को भी तिलांजलि दे दी गई। उसी तरह विषय-समिति की बैठक में डॉ. हेडगेवार ने कांग्रेस के उद्‌देश्य के संबंध में प्रस्ताव रखा, 'भारतीय गणतंत्र की स्थापना करना तथा पूँजीवादी अत्याचारों से राष्ट्रों को मुक्त करना'। इस प्रस्ताव की भाषा से पता चलता है कि डॉ. हेडगेवार ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को अंतरराष्ट्रीय मंच का विषय बनाकर विश्व के सभी देशों को ब्रिटिश साम्राज्यवाद पर प्रहार करने की प्रेरणा देने का प्रयास किया था। कितनी गहरी और दूरदर्शितापूर्ण रणनीति थी यह। परंतु कांग्रेस में इस सोच का आधार समझनेवालों की कमी के कारण यह प्रस्ताव भी पारित नहीं हो सका।

अपने विचारों पर अडिग

कांग्रेस के नेताओं ने जब विजय राघवाचार्य का नाम नागपुर-अधिवेशन के अध्यक्ष के लिए प्रस्तावित किया, तो स्वागत-समिति की बैठक में डॉ. हेडगेवार ने इसका विरोध किया कि 'देश की भावनाओं और साम्राज्यवाद के असली चरित्र को न समझनेवाला व्यक्ति कांग्रेस का अध्यक्ष कैसे हो सकता है?' ज्ञातव्य है कि

विजय राघवाचार्य कांग्रेस को स्वतंत्रता-आंदोलन से दूर रखना चाहते थे। वे महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन की मूल भावना से भी सहमति नहीं रखते थे। उनका ब्रिटिश शासकों के प्रति भी नरम रुख था। जलियाँवाला बाग नरसंहार के बाद जब सारे देश में आक्रोश का माहौल था, तब ये सज्जन मद्रास के अंग्रेज गवर्नर के साथ जलपान का आनंद ले रहे थे। कांग्रेस द्वारा बनाए गए इस अध्यक्ष महोदय ने अपने अध्यक्षीय भाषण में स्वतंत्रता अथवा स्वराज्य का तो नाम तक नहीं लिया, उल्टा असहयोग आंदोलन में विद्यालयों-महाविद्यालयों तथा न्यायालयों के बहिष्कार को बर्खास्त कर डाला।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नागपुर-अधिवेशन में डॉ. केशवराव हेडगेवार की भागीदारी से उनके चरित्र की दृढता, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के प्रति अटल निष्ठा, पूर्ण स्वतंत्रता के लिए सभी मार्गों का औचित्य और अपने प्रिय नेताओं की अप्रिय बातों का भी डटकर विरोध करने का साहस इत्यादि से उनके संपूर्ण राष्ट्रवादी व्यक्तित्व का सहज आभास हो जाता है। असहयोग आंदोलन में कांग्रेस के एक पूर्णकालिक अवैतनिक कार्यकर्ता और निडर नेता के रूप में अपनी निरंतर सक्रियता करते हुए उन्होंने एक दिन भी अपनी मूल प्रखर राष्ट्रवादी विचारधारा तथा सिद्धांतों से समझौता नहीं किया।

असहमति में भी सहमति का आदर्श

कांग्रेस के साथ अनेक मुद्दों पर विचार-भिन्नता होते हुए भी डॉ. हेडगेवार ने कांग्रेस के अंदर एक आदर्श कार्यकर्ता के रूप में अपना स्थान बना लिया था। नागपुर में संपन्न कांग्रेस के अखिल भारतीय अधिवेशन से पूर्व मध्य भारत की प्रांतीय कांग्रेस समिति ने 'असहयोग मंडल' नाम से एक दल तैयार कर लिया था। डॉ. हेडगेवार को इस मंडल में एक सक्रिय भूमिका के लिए नियुक्त किया गया। इनको जनसभाओं के आयोजन का प्रमुख कार्य सौंपा गया। डॉक्टर साहिब ने दिन-रात परिश्रमपूर्वक इसको सफलतापूर्वक संपन्न करके कांग्रेस की प्रांतीय समिति में अपना प्रभाव जमा लिया। अब वे 'कांग्रेस के नेता' भी कहलाने लगे। नारायण हरि पाळकर ने डॉक्टर साहिब की जीवनी में लिखा है—'डॉक्टरजी को राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिए जैसे हिंसा से घृणा नहीं थी, वैसे ही उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए असहयोग आंदोलन से भी उनका असहयोग नहीं था। विदेशियों को किसी भी मार्ग से बाहर निकालने के लिए आगे आनेवाले व्यक्ति पर डॉक्टरजी को अभिमान ही होता था, इसीलिए वे उसके साथ भरसक सहयोग करते थे। वैसे

डॉक्टरजी व उनके सहयोगियों को विधानसभाओं के द्वारा स्वतंत्रता प्राप्ति के मार्ग पर विश्वास नहीं था।'

"कांग्रेस-अधिवेशन में अखिल भारतीय कार्यसमिति की एक घटना ने डॉक्टरजी के विचारों को जोरदार धक्का दिया। 'ननद का ननदोई मेरा लगे न कोई'—यह उक्ति चरितार्थ होते हुए भी मुसलमानों को निकट लाने के लिए कांग्रेस ने खिलाफत का मुद्दा अपने हाथ में ले लिया था, परंतु उसी कांग्रेस से जब श्री वदे ने यह प्रार्थना की कि गोरक्षा का प्रश्न राष्ट्रीय है, अतः कांग्रेस को उस संबंध में भी कुछ करना चाहिए तो कहा गया कि इससे मुसलमानों की भावनाएँ दुःखी होंगी। अतः यह प्रश्न कांग्रेस अपने हाथ में नहीं ले सकती।" डॉक्टरजी को इस घटना से बड़ी चोट पहुँची। इस प्रकार से अनेक विषयों पर विचारभिन्नता के होते हुए भी डॉक्टर हेडगेवार ने कांग्रेस के कार्यकर्ता के नाते स्वाधीनता आंदोलन में भागीदारी करने से परहेज नहीं किया; क्योंकि उस समय स्वाधीनता के लिए संघर्षरत कांग्रेस ही एकमात्र सबसे बड़ा मंच था।

नागपुर में संपन्न कांग्रेस के अखिल भारतीय अधिवेशन में प्रायः सभी प्रमुख समितियों के माध्यम से सक्रिय रहकर डॉ. हेडगेवार ने अपने संगठन-कौशल एवं अपनी ध्येयनिष्ठ विचारधारा की अमिट छाप छोड़कर स्पष्ट कर दिया कि वह भारत की पूर्ण स्वतंत्रता के लिए सशस्त्र क्रांति तथा अहिंसावादी सत्याग्रह इत्यादि किसी भी मार्ग पर चलने के लिए कटिबद्ध हैं। डॉक्टर साहिब के अनुसार, जिस प्रकार सभी छोटी-बड़ी नदियों के रास्ते भिन्न होते हुए सबका अंतिम लक्ष्य एक ही होता है—समुद्र को प्राप्त करना, उसी तरह ब्रिटिश शासन के विरुद्ध संघर्षरत सभी स्वतंत्रता-सेनानियों, क्रांतिकारियों, आंदोलनकारियों, सत्याग्रहियों, राष्ट्रभक्त कवियों, यहाँ तक कि घर में बैठकर परमात्मा से अंग्रेजसत्ता को समाप्त करने की प्रार्थना करनेवालों का अंतिम लक्ष्य एक ही है—'अखंड भारत की पूर्ण स्वतंत्रता'। इसीलिए डॉ. हेडगेवार ने 'मैं' से ऊपर उठकर 'हम' के सिद्धांत पर चलते हुए सर्व प्रकार के स्वतंत्रता-सेनानियों का तन, मन, धन एवं संकल्प के साथ सहयोग करने में तनिक भी संकोच नहीं किया।

असहयोग आंदोलन में पूरा सहयोग

प्रखर राष्ट्रभक्ति की सुदृढ़ मानसिकता के साथ डॉ. हेडगेवार ने 'कांग्रेसी' कहलाना भी स्वीकार कर लिया। नागपुर-अधिवेशन में अपना रुतबा जमाने के बाद वे महात्मा गांधी द्वारा मार्गदर्शित असहयोग आंदोलन को सफल बनाने के

लिए जी-जान से जुट गए। गांधीजी के आह्वान पर सारा देश असहयोग आंदोलन में हर प्रकार से शिरकत करने के लिए तैयार हो गया। पूर्व में अनुशीलन समिति द्वारा संचालित सशस्त्र क्रांति और बाद में 1857 जैसे ही एक महाविप्लव की तैयारी में भागीदारी करने के पश्चात् डॉ. हेडगेवार ने अब असहयोग आंदोलन के जरिए देश को स्वतंत्र कराने का मार्ग चुना। अन्याय के विरुद्ध किसी भी तरीके से संघर्षरत रहना उनके क्रांतिकारी स्वभाव का अभिन्न हिस्सा था। महात्मा गांधीजी द्वारा की गई घोषणा 'एक वर्ष में स्वराज्य' पर सारा देश मुग्ध हो गया। आंदोलन जोर पकड़ता गया। सत्याग्रहियों के जत्थे सरकारी निषेधाज्ञा करके सड़कों पर उतर आए। लोगों के उत्साह से सरकार के होश उड़ गए। महात्मा गांधीजी ने देशवासियों से हिंसा न फैलाने की अपील की। इस अपील को शिरोधार्य करते हुए डॉ. हेडगेवार जैसे महाक्रांति के योद्धाओं ने भी अहिंसा के मार्ग को अपनाकर 'एक वर्ष में स्वराज्य' के उद्घोष को घर-घर में पहुँचा दिया। भले ही भविष्यदृष्टा डॉक्टर साहिब उस घोषणा से इत्तफाक न रखते हों, तो भी उन्होंने इस आंदोलन को सफलता की बुलंदियों तक पहुँचाने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी।

न्यायालयों और शिक्षण संस्थानों का बहिष्कार, राष्ट्रीय विद्यालयों का प्रारंभ, सरकारी पदवियों की वापसी, घर-घर में चर्खा चलाने का आह्वान, जलसे-जुलूस-प्रदर्शन, घेराव इत्यादि जोरदार अहिंसक अभियान पूरे युद्धस्तर पर शुरू करने के उद्देश्य से प्रायः सभी कांग्रेसी नेताओं के साथ कंधे-से कंधा मिलाकर डॉ. हेडगेवार ने भी अपने धुआँधार भाषण प्रारंभ कर दिए। वे मराठी-भाषा में बोलते थे, इसलिए उनकी तेजस्वी वाणी सीधे आम जनता के अंतर में प्रवेश कर जाती थी। असहयोग से पहले तीन महीनों में ही डॉक्टर साहिब मध्य प्रांत के समाचार-पत्रों की सुर्खियाँ बटोरने लग गए। देवली, वर्धा, खापा, केलवाद, तलेगाँव, भंडारा, इत्यादि क्षेत्रों के गाँवों, परगना तथा जिला-परिषदों में जनसभाओं का ताँता लग गया। इन अत्यंत स्फूर्तिदायक तथा हृदय को झकझोर देनेवाले भाषणों की चर्चा हर जुबान पर होने लगी। मध्य प्रांत के दूरदराज के क्षेत्रों से डॉ. हेडगेवार को जनसभाओं में अध्यक्षता के निमंत्रण मिलने लगे। यहाँ तक कि डॉ. नारायणराव सावरकर के सहयोग से बंबई महानगर जैसे व्यस्त क्षेत्रों में भी उनके भाषणों ने अहिंसक क्रांति का तूफान खड़ा कर दिया।

डॉक्टरजी के भाषणों में जोरदार ढंग से रखे गए तर्कों से मध्य प्रांत के अनेक गण्यमान्य नेता प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके। उस समय के एक प्रसिद्ध

सामाजिक नेता दादाराव परमार्थ कहते थे कि "अंग्रेज तथा अंग्रेजी राज्य की चर्चा शुरू हुई कि डॉक्टर साहब का आवेश काबू के बाहर हो जाता था। उस समय उनके शब्द सुनकर ऐसा प्रतीत होता था, मानो शत्रु सामने खड़ा है और वे 'डॉक्टरजी' उसके ऊपर प्रबल आक्रमण कर रहे हों। सिर से लेकर पैर तक उनके शरीर में क्रोध का संचार हो जाता था। लाल-लाल आँखें, बँधी हुई मुट्ठी तथा बाहुओं में स्फूर्ति, उस प्रकार का जाज्वल्यमान स्वरूप उस समय उनका दिखाई देता था। उनके भाषणों से साधारण लोग ही नहीं, युवा विद्यार्थी उत्साह के साथ असहयोग आंदोलन में कूद पड़ते थे, वहीं कांग्रेस के नर्म प्रवृति के नेताओं/कार्यकताओं को बनावटी कष्ट होता था। ऐसे लोग अकसर डॉक्टरजी के भाषण भी पूरी उत्सुकता के साथ सुनते थे और कहीं और जाकर अपनी नाराजगी भी प्रकट करके गांधीजी के प्रति अपनी वफादारी का नाटक करते थे।"

गांधीजी के साथ विचार-विमर्श

महात्मा गांधीजी ने असहयोग आंदोलन की सफलता के निमित्त मुसलिम समाज को भी जोड़ने के लिए खिलाफत आंदोलन का समर्थन करके इस असहयोग आंदोलन का हिस्सा बनाने की भरपूर कोशिश की। डॉ. हेडगेवार यद्यपि गांधीजी से असहमत थे, परंतु उन्होंने समय की संवेदनशीलता को देखते हुए कहीं भी सार्वजनिक रूप से गांधीजी की अवहेलना नहीं की। डॉक्टरजी नहीं चाहते थे कि उस आंदोलन को किसी भी रूप में कोई नुकसान पहुँचे, परंतु अपनी बात को ठीक जगह कहने के लिए भी हिचकिचाते नहीं थे। अत: उन्होंने गांधीजी से समय लेकर भेंट की और बातचीत में सीधा प्रश्न करके 'हिंदू मुसलिम एकता' के नारे के औचित्य को जानना चाहा। उन्होंने कहा, "वास्तव में हिंदुस्तान में तो हिंदू, मुसलिम, ईसाई, पारसी और यहूदी आदि अनेक लोग रहते हैं। उन सबकी कल्पना रखने के स्थान पर आप केवल यही क्यों बोलते हैं कि हिंदू-मुसलिम की एकता होनी चाहिए।" इस प्रश्न का उत्तर गांधीजी ने अत्यंत सहज भाव से दिया—"इस कारण मैंने मुसलमानों के संबंध में देश के लिए आत्मीयता उत्पन्न की है। जिसे आप प्रत्यक्ष देख रहे हैं कि वे इस राष्ट्रीय आंदोलन में कंधे से कंधा मिलाकर कार्य कर रहे हैं।" प्रत्येक परिस्थिति और मुद्दे पर गंभीरता से विचार करके ही अपनी धारणा बनानेवाले डॉक्टरजी को गांधीजी के इस उत्तर से संतुष्टि नहीं हुई। अत: उन्होंने पुन: कहा कि "हिंदू-मुसलिम एकता इस शब्द के प्रचार में आने के पूर्व अनेक मुसलमान, राष्ट्र के संबंध में अपने प्रेम के कारण लोकमान्य तिलक के नेतृत्व में काम करते थे। डॉ. अंसारी, हकीम अजमल

खाँ आदि कई के नाम लिये जा सकते हैं, परंतु इस नए शब्द प्रयोग से तो मुझे आशंका है कि मुसलमानों में एकता के स्थान पर पराएपन की ही भावना बढ़ेगी।" शायद गांधीजी इस युवा स्वतंत्रता सेनानी के साथ ज्यादा चर्चा करने के मूड़ में नहीं थे, अतः उन्होंने एक ही पंक्ति में इस वार्तालाप का पटाक्षेप कर दिया—"मुझे तो ऐसी कोई आशंका नहीं।"

गांधीजी के इस निराशाजनक उत्तर के बाद भी डॉ. हेडगेवार असहयोग आंदोलन में बिना रुके और विश्राम किए लगे रहे। इसी समय नागपुर के आस-पास के इलाकों में नशाबंदी को लागू करवाने के कार्यक्रम को भी असहयोग आंदोलन का भाग बना दिया गया। डॉ. हेडगेवार ने मध्य प्रदेश की सरकार के आर्थिक तंत्र को अस्त-व्यस्त करने हेतु लोगों के शराब न खरीदने की जोरदार अपील की। शराब की बिक्री बहुत कम हो गई और सरकार आर्थिक घाटे से तंग आ गई। डॉक्टरजी के धुआँधार प्रचार एवं भाषणों से घबराकर सरकार ने उनके भाषणों पर एक महीने का प्रतिबंध लगा दिया। नागपुर के तत्कालीन जिलाधिकारी सिरिल जेम्स इरविन ने धारा 144 के अंतर्गत 23 फरवरी, 1921 को एक आदेश जारी कर दिया। इस आदेश के अनुसार एक माह तक किसी भी सार्वजनिक स्थान पर सभा करने और भाषण देने की मनाही कर दी गई, परंतु डॉ. हेडगेवार ने अपना प्रचार जारी रखा। एक बार कोई निर्णय लेने के बाद वे पीछे मुड़कर नहीं देखते थे और न ही अपनी गति को कम करना उनकी आदत में शुमार था। अलबत्ता उन्होंने प्रचारात्मक अभियान को पहले से भी कहीं ज्यादा तेज कर दिया।

डॉ. हेडगेवार पर राजद्रोह का मुकदमा

सरकार किसी भी प्रकार से डॉ. हेडगेवार को कानून के शिकंजे में जकड़ना चाहती थी। अतः उनके पूर्व काल के दो भाषणों को अपत्तिजनक करार देकर डॉक्टरजी पर मई 1921 में राजद्रोह का मुकदमा दायर कर दिया गया। उल्लेखनीय है कि महाराष्ट्र के प्रसिद्ध लेखक एवं पत्रकार और डॉ. हेडगेवार के विद्यार्थी जीवन से चले आ रहे अभिन्न मित्र एवं सक्रय सहयोगी श्री ना.ह. पालकर ने अपनी पुस्तक 'डॉ. हेडगेवार चरित' के पृष्ठ 100 से 106 तक में इस मुकदमे की संपूर्ण तथ्यपरक जानकारी दी है। यह पुस्तक पहली बार 1960 में छपी थी। पालकर स्वयं भी उस मुकदमे के प्रत्यक्षदर्शी थे।

"पहले दिन 14 जून को पुलिस इंस्पेक्टर आबाजी की गवाही हुई तथा दूसरे दिन श्री बोबडे ने प्रतिपरीक्षण (जिरह) किया। किंतु श्री स्मेली की ओर से श्री बोबडे

के मार्ग में बराबर रुकावट होने लगी। "यह प्रश्न पूछा नहीं जा सकता", "यह प्रश्न असंबद्ध है", "यह अभियोग से संगति नहीं खाता" इस प्रकार के वाक्य श्री बोबडे को एक कदम नहीं चलने देते थे। गाड़ी की जंजीर यदि बार-बार खींची जाए तो वह अपनी यात्रा पूरी कर सकेगी, इसमें संदेह ही है। दिनांक 20 जून को आबाजी का प्रतिपरीक्षण करते हुए श्री बोबडे ने प्रश्न पूछा, "डॉक्टर हेडगेवार यही प्रतिपादन कर रहे थे कि हिंदुस्थान हिंदुस्थान के लोगों का है।" परंतु श्री स्मेली ने यह प्रश्न लिखने से इनकार कर दिया। इस पर बोबडे क्रोध में आकर "न्यायाधीश मुझे जिरह नहीं करने देता, अतः मैं यह मुकदमा नहीं कर सकता" कहते हुए कचहरी से बाहर चले गए। उस समय डॉक्टरजी ने कहा, "मैं अपना मुकदमा दूसरे न्यायालय में भेजने की अर्जी देनेवाला हूँ। अतः अभी मुकदमा स्थगित कर दिया जाए।" इस पर दोपहर दो बजे काम रोक दिया गया।

दिनांक 25 जून को जिलाधिकारी श्री इरविन के पास मुकदमा दूसरी न्यायालय में भेजने के लिए आवेदन-पत्र दिया गया। उसमें डॉक्टरजी ने लिखा था कि "मजिस्ट्रेट साहब को मराठी का टूटा-फूटा ज्ञान भी है या नहीं, यह शंका मुकदमा चलते-चलते पैदा हो गई है। भाषण तथा टेपें तो सब मराठी में ही हैं। अतः इस प्रकार के मजिस्ट्रेट के लिए नियम और न्याय के अनुसार मुकदमा समझना ही अशक्य है। अतः श्री स्मेली यह मुकदमा सुनने के लिए अपात्र हैं। इसके अतिरिक्त श्री स्मेली में एक महत्त्व के राजनैतिक फौजदारी मुकदमे को सुनने के लिए आवश्यक सामान्य ज्ञान का भारी अभाव दिखता है। आरोपों के वकील ने जिरह में जब कुछ प्रश्न पूछे तो 'मुख्य परीक्षण में जो मुद्दे बाहर आए हैं, उनके संबंध में ही प्रतिप्रश्न पूछो। अन्य कोई बात सिद्ध करनी हो तो अपनी ओर से गवाही और सबूत पेश करो।' इस प्रकार की विभिन्न आपत्तियाँ उठाकर वे प्रश्न नहीं पूछने दिए गए। उन प्रश्नों का यदि गवाह से उत्तर मिलता तो यह तुरंत सिद्ध हो जाता कि अभियुक्त के भाषण में राजद्रोह की कोई बात नहीं है, परंतु मजिस्ट्रेट की तो प्रत्येक प्रश्न के संबंध में कुछ-न-कुछ आपत्ति ही थी। प्रत्येक प्रश्न के अवसर पर उस प्रश्न का उद्देश्य उनको समझाना पड़ता था, तब कहीं काम आगे चलता था। इस कारण गवाह को टालमटोल करना तथा प्रश्न को उड़ा देना सरल था। दिनांक 14 जून को इतनी देर जिरह हुई, परंतु मजिस्ट्रेट साहब के टेप के कागज अगर देखे जाएँ तो वे वैसे ही कोरे-कोरे मिलेंगे। फलतः अभियुक्त के वकील को न्यायालय छोड़कर जाना पड़ा। सदर मजिस्ट्रेट के न्यायालय में मुकदमे की योग्य सुनवाई होगी, ऐसा नहीं लगता। साथ ही इस मुकदमे में पैरवी करने के लिए दूसरा

कोई वकील उस न्यायालय में नहीं जा सकता। अतः यह मुकदमा दूसरे न्यायालय में भेजना चाहिए।"

इस आवेदन की भाषा से यह बताने की आवश्यकता नहीं कि अंग्रेज अधिकारी श्री इरविन ने इस पर क्या फैसला दिया होगा। दिनांक 27 जून को अर्जी खारिज कर दी गई। उस समय न्यायालय में डॉक्टरजी की ओर से एक भी वकील उपस्थित नहीं था। उस दिन श्री स्मेली ने डॉक्टरजी को अपना लिखित उत्तर देने को कहा। इस पर डॉक्टरजी ने कहा, "सबूत पक्ष की सब बातें सामने आ जाने दीजिए, उसके बाद मुझे जो कुछ कहना होगा कहूँगा।" "कोर्ट को जब आवश्यक लगे तब लिखित उत्तर माँगा जा सकता है," श्री स्मेली ने कहा। इस पर डॉक्टरजी निश्चयात्मक स्वर में बोले, "मुझे जो कहना था कह दिया। अंत में उत्तर दूँगा।" उस दिन का काम यहीं पूरा हो गया।

दिनांक 8 जुलाई को मुकदमा फिर से शुरू हुआ और काटोल विभाग के सर्किल इंसपेक्टर श्री गंगाधरराव की साक्षी हुई। उसके समाप्त होते ही डॉक्टरजी ने स्वयं ही जिरह करना प्रारंभ कर दिया। उसका कुछ भाग यहाँ उद्धृत करना ठीक होगा। श्री गंगाधरराव ने कहा, "लगभग सात-पौने आठ बजे के अंदर ही सभा खत्म हो गई। हम लोग चोरबत्ती के प्रकाश में रिपोर्ट लिख रहे थे। इस पर डॉक्टरजी ने कहा, ये अँधेरे में थे तथा इनके पास कोई भी चोरबत्ती नहीं थी। मैं शुद्ध मराठी बोलनेवाला हूँ, परंतु मेरे मुँह में इन्होंने 'बायकोचा पोर' ऐसे शब्द डाले हैं।" इस पर गवाह ने कहा, "मुझे व्याकरण के नियम नहीं आते। मैं अपनी माताजी से तेलुगु में बोलता हूँ तथा पत्नी से मराठी में। मैं औसतन एक मिनट में पच्चीस-तीस शब्द लिख सकता हूँ। कभी-कभी पूरे वाक्य लिख लेता था तथा कभी-कभी एकाध शब्द अथवा वाक्य का सारांश लिख लेता था। सारांश लिखने के लिए संपूर्ण वाक्य सुनने की आवश्यकता नहीं। सारांश लिखते समय मुझे विचार करना नहीं पड़ा। जैसे-जैसे आप बोलते गए, वैसे-वैसे मैं सारांश लिखता गया। जो समझ में नहीं आता था उसका सारांश मैं दूसरों से पूछकर लिखता था। यह काम मैं जिस समय वक्ता बीच में दूसरे से बोलता था, उस समय करता था (तथा प्रत्येक वक्ता बीच-बीच में दूसरे से बोलता ही है)'''डॉक्टर प्रति मिनट बीस-पच्चीस शब्द बोलते थे। व्याख्यान सुनते समय वक्ता की कही हुई बातें सही हैं, ऐसा मानकर दूसरों के समान मेरे मन पर भी प्रभाव हुआ, परंतु वक्ता सब झूठ बातें बतानेवाला है, यह मुझे पक्का पता था।"

जिरह से इस प्रकार की बातें निकालने के बाद डॉक्टर स्मेली की ओर मुड़े तथा बोले, "भाषण की रिपोर्ट लेने में सर्किल साहब कितने पटु हैं, इसकी परीक्षा लेने की अनुमति दी जाए।" परंतु यह अनुमति नहीं दी गई।

इस पर डॉक्टरजी ने भाषण देकर अपने पक्ष का प्रतिपादन किया। उसमें विधिज्ञ का मार्दव न रहा हो तो भी उसकी मार्मिकता और स्पष्टवादिता उल्लेखनीय है। उन्होंने कहा, "कोर्ट के समक्ष आए हुए भाषण मेरे नहीं हैं। मैं प्रति मिनट औसतन दो सौ शब्द बोलता हूँ तथा जो मेरे भाषण की रिपोर्ट लेने के लिए लांगहैंड के नौसिखिए रिपोर्टर आए, वे तो भाषण का आठवाँ भाग भी नहीं लिख सके होंगे। अतः वादी की ओर से प्रस्तुत संपूर्ण रिपोर्ट में टूटे-फूटे वाक्य एवं शब्द तथा अधूरी बातें हैं तथा उन सबका पारस्परिक संबंध राजनीतिक कल्पनाओं एवं विचारों को समझने में अत्यंत अयोग्य पुलिस ने अपने उपजाऊ मस्तिष्क से, जैसा समझ में आया वैसा तथा जब आवश्यकता हुई तब, अपनी स्मरणशक्ति की मदद लेकर लगाया होगा, इसमें कोई संशय नहीं। संपूर्ण रिपोर्ट से यह किसी को भी पता नहीं चल सकता कि मैं क्या अथवा कैसा बोला। फिर भरतवाडा के मेरे अंतिम भाषण की तो रिपार्ट लेना ही संभव नहीं था, क्योंकि उस समय इतना अंधकार था कि उसमें कागज अथवा पेंसिल भी दिखना संभव नहीं था तथा पुलिस के पास कोई प्रकाश नहीं था। अतः मेरे भाषण की रिपोर्ट जो यहाँ दी गई है, वह बिल्कुल बनावटी तथा यह दिखाने के लिए है कि 'जनता के आंदोलन को दबाने के लिए हम लोग कितनी दौड़-धूप कर रहे हैं।' स्पष्ट ही यह पुलिसवालों के द्वारा बाद में योजनापूर्वक बनाई हुई दिखती है। रिपोर्ट को तनिक भी गौर से देखा जाए तो पढ़े-लिखे व्यक्ती को साफ समझ में आ जाएगा कि वह कितनी झूठी है। इसी भय के कारण, ऐसा दिखता है कि कोर्ट में कुछ नोट्स पढ़े भी नहीं गए। तात्पर्य यह है कि योग्य रीति से मुकदमा चलता तो वादीपक्ष की भूमिका पूरी तरह से ढह जाती, यह अभी बताई गई बातों से स्पष्ट हो जाएगा। अपनी रिपोर्ट लेने की पद्धति तथा मेरे भाषण करने के वेग के संबंध में श्री गंगाधरराव ने जो हास्यास्पद बातें कहीं हैं, उन्हें देखकर किसी भी जूडिशियल माइंड को यह प्रतीत हुए बिना नहीं रहेगा कि वादीपक्ष की रिपोर्ट किसी भी काम की नहीं है। इसी प्रकार सभाओं में मेरे भाषण के सामान्य गति से बोलने पर गवाह कितने शब्द लिख सकता है, यह दिखाने का यदि मुझे अवसर दिया जाता तो पुलिस अधिकारियों की असत्यता तथा नीच वृत्ति सबके सामने प्रकट हो जाती, परंतु आश्चर्य और खेद की बात तो यह है कि मेरे मुकदमे में अधिकतम अड़चने डाली गई हैं। मातृभूमि के

भक्तों को दमनचक्र में पीसनेवाली सरकार पर मेरे यहाँ किए हुए निषेध का कोई परिणाम नहीं होगा, यह मैं जानता हूँ। मैं अभी भी यही कहता हूँ कि हिंदुस्थान हम देशवासियों का है तथा स्वराज्य हमारा ध्येय है। आज तक ब्रिटिश प्रधानमंत्री तथा ब्रिटिश सरकार द्वारा की हुई आत्मनिर्णय की घोषणाएँ यदि ढोंग थीं तो सरकार खुशी से मेरे भाषण को राजद्रोह समझे। पर मेरा ईश्वर के न्याय पर विश्वास अटल है।"

डॉक्टरजी ने माँग की कि उनको अन्य गवाहों से भी जिरह करनी है। परंतु एक का जब यह हाल हुआ तो आगे क्या होगा, संभवत: यह सोचकर स्मेली ने उसे स्वीकार नहीं किया। मुकदमा 5 अगस्त तक के लिए स्थगित हो गया।

5 अगस्त को मुकदमा प्रारंभ होने पर डॉक्टरजी ने अपना लिखित उत्तर तथा अपनी भूमिका स्पष्ट करनेवाला एक भाषण दिया। उनके साथ कोई वकील न होने के कारण सबकुछ उन्हें अकेले ही करना पड़ता था। अपने लिखिल उत्तर में उन्होंने कहा कि''

(1) "मेरे भाषण कायदे से प्रस्थापित ब्रिटिश राज्य के विरुद्ध असंतोष, द्वेष व द्रोह उत्पन्न करनेवाले तथा हिंदी और यूरोपीय लोगों के बीच शत्रुभाव पैदा करनेवाले हैं, मेरे ऊपर लगाए गए इस अभियोग का स्पष्टीकरण मुझसे माँगा गया है। एक भारतीय के किए की जाँच और न्यायदान के लिए एक परायी राजसत्ता बैठे, इसे मैं अपना तथा अपने महान् देश का अपमान समझता हूँ।"

(2) "हिंदुस्थान में न्यायाधिष्ठित कोई शासन है, ऐसा मुझे नहीं लगता तथा यदि मुझे इस प्रकार की बात बताए तो मुझे आश्चर्य ही होगा। हमारे यहाँ आज जो कुछ है, वह तो पाशवी शक्ति के बल पर लादा हुआ भय और आतंक का साम्राज्य है। कानून उसका दास तथा न्यायालय उसके खिलौने मात्र हैं। विश्व के किसी भी भू-भाग में यदि किसी शासन को रहने का अधिकार है तो वह जनता के द्वारा, जनता के लिए तथा जनता की सरकार को है। इसके अतिरिक्त अन्य सभी शासन राष्ट्रों को लूटने के लिए धूर्त लोगों द्वारा योजनापूर्वक चलाए हुए धोखेबाजी के नमूने हैं।

(3) "मैंने अपने देशबांधवों में अपनी दीन-हीन मातृभूमि के प्रति उत्कट भक्तभाव जगाने का प्रयत्न किया। मैंने उनके हृदय पर यह अंकित करने का प्रयत्न किया कि भारत भारतवासियों का ही है। यदि एक भारतीय राजद्रोह किए बिना राष्ट्रभक्ति के ये तत्त्व प्रतिपादित नहीं कर सकता

तथा भारतीय एवं यूरोपीय लोगों में शत्रुभाव जगाए बिना वह साफ सत्य नहीं बोल सकता, यदि स्थिति इस कोटि तक पहुँच गई है तो यूरोपीय तथा वे जो अपने को भारत सरकार कहते हैं, उन्हें सावधान हो जाना चाहिए कि अब उनके ससम्मान वापस चले जाने की घड़ी आ गई है।"

(4) "मेरे भाषण की टिप्पणियाँ पूरी तरह सही-सही नहीं ली गईं, यह स्पष्ट दिख रहा है तथा जो मैंने कहा, ऐसा बताया जा रहा है, वह मेरे भाषण का टूटा-फूटा, कुछ-का-कुछ तथा विपर्यस्त विवरण है, किंतु मुझे इसकी चिंता नहीं। राष्ट्र-राष्ट्र के संबंध जिन मूलभूत तत्त्वों से निर्धारित होते हैं, उसी आधार पर ग्रेट ब्रिटेन तथा यूरोपीय लोगों के प्रति मेरा बर्ताव है। मैंने जो-जो कहा, वह अपने देश-बंधुओं के अधिकार तथा स्वातंत्र्य की प्रस्थापना के लिए कहा तथा मैं अपने प्रत्येक शब्द का दायित्व लेने के लिए तैयार हूँ। जो मेरे ऊपर आरोपित है, उसके संबंध में यदि मैं कुछ नहीं कह सकता तो मैं उसके एक-एक अक्षर का समर्थन करने के लिए तैयार हूँ तथा कहता हूँ कि वह सब न्यायोचित है।"

इन जलते हुए अंगारों के हाथ में पड़ते ही मजिस्ट्रेट साहब बोल उठे, "इनके मूल भाषण की अपेक्षा तो यह प्रतिवाद करनेवाला वक्तव्य अधिक राजद्रोहपूर्ण है।" (This statement is more seditious than his speech.)

''इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं, क्योंकि अपने वक्तव्य में डॉक्टरजी ने किसी भी प्रकार का आवरण न रखते हुए अपना अंतरंग ही व्यक्त किया था। उसमें स्पष्टता तथा असंदिग्धता थी और प्रतिपक्ष पर झपटनेवाले सिंह का आवेश एवं रौद्रता झलक रही थी। नागपुर-कांग्रेस में स्वागत-समिति के प्रस्ताव के रूप में जिस प्रजातंत्रीय राज्य का स्वर दबा दिया गया था, उसी प्रजातंत्र की घन-गंभीर घोषणा से डॉक्टरजी अंग्रेजों के अन्यायी शासन को कंपायमान कर रहे थे।

लिखित वक्तव्य तो दे दिया, मानो उसमें कोई कमी रह गई हो, इस हेतु से उस समय भाषण करके उन्होंने न्यायालय के संपूर्ण वातावरण को तपा दिया। उसमें जैसा अपूर्व युक्तवाद था, वैसा ही निर्भयता का स्वर भी था।''

न्यायालय में सत्ता विरोधी तीखा भाषण

''सरकार द्वारा पुलिस के अतिरिक्त और कोई गवाही पेश नहीं की गई थी तथा पुलिसवाले तो सब सरकार के बगलबच्चे होने के कारण उन्हें "गवाह के स्थान पर वादी कहना सयुक्तिक होगा", इन शब्दों में सरकार की टीका करते हुए

उन्होंने आगे कहा, "हिंदुस्थान हिंदुस्थान के लोगों का ही है। अत: हमें हिंदुस्थान में स्वराज्य चाहिए, यही बहुधा मेरे व्याख्यानों का विषय रहता है, परंतु इतने से काम नहीं चलता। स्वराज्य कैसे प्राप्त करना चाहिए तथा प्राप्त करने के बाद हमें कैसे रहना चाहिए, यह भी लोगों को बताना होता है। नहीं तो 'यथा राजा तथा प्रजा' के न्याय के अनुसार हमारे लोग अंग्रेजों का अनुकरण करने लगेंगे। अंग्रेज तो अपने देश के राज्य से संतुष्ट न होकर दूसरे के देश पर डाका डालकर, वहाँ के लोगों को गुलाम बनाकर उन पर राज्य करने को तथा स्वयं की स्वतंत्रता पर यदि आपत्ति लाई तो तलवार निकालकर रक्त की नदियाँ बहाने को तैयार रहते हैं। यह अभी हाल के महायुद्ध से सबको पता चल चुका है। अत: हमें लोगों को बताना पड़ता है कि 'बंधुओ! तुम अंग्रेजों के इस राक्षसी गुण का अनुकरण मत करना। केवल शांति के मार्ग से ही स्वराज्य प्राप्त करो तथा स्वराज्य मिलने के बाद किसी दूसरे के देश पर चढ़ाई न करते हुए अपने ही देश में संतुष्ट रहो।' यह बात लोगों के मन में जमाने के लिए मैं उन्हें यह तत्त्व भी समझाता हूँ कि एक देश के लोगों का दूसरे देश के लोगों पर राज्य करना अन्याय है। उस समय प्रचलित राजनीति से संबंध आ जाता है। कारण अपने इस प्रियतम देश पर दुर्दैव से पराए अंग्रेज लोग अन्याय से राज कर रहे हैं, यह हमें प्रत्यक्ष दिख रहा है। वास्तव में ऐसा कोई नियम है क्या, जिसके अंतर्गत एक देश के लोगों को दूसरे देश पर राज्य करने का अधिकार प्राप्त होता हो? सरकारी वकील साहब! आपसे मेरा यह प्रश्न है। क्या आप इस प्रश्न का उत्तर मुझे देंगे? क्या यह बात निसर्ग के नियम के विरुद्ध नहीं है? यदि यह तर्क सही है कि एक देश के लोगों को दूसरे पर राज्य करने का अधिकार नहीं है तो फिर हिंदुस्थान के लोगों को अपने पैरों के नीचे दबाकर उन पर राज्य करने का अधिकार अंग्रेजों को किसने दिया? अंग्रेज लोग इस देश के नहीं हैं न? फिर हिंदुभूमि के लोगों को गुलाम बनाकर 'हिंदुस्थान के हम मालिक हैं' ऐसा कहना न्याय का, नीति का तथा धर्म का खून नहीं है क्या?"

"इंग्लैंड को परतंत्र करके उस पर राज्य करने की हमें इच्छा नहीं है, परंतु जिस प्रकार इंग्लैंड के लोग इंग्लैंड में और जर्मनी के जर्मनी में राज्य करते हैं, वैसे ही हम हिंदुस्थान के लोग हिंदुस्थान के स्वामी होकर राज्य करना चाहते हैं। अंग्रेजी साम्राज्य में रहकर अंग्रेजों की दासता की सदा के लिए छाप अपने ऊपर अंकित कर लेने की हमारी इच्छा नहीं है। हमें पूर्ण स्वातंत्र्य चाहिए तथा वह लिये बिना हम चुप नहीं बैठेंगे। हम अपने देश में स्वतंत्रता के साथ रहने की इच्छा करें, क्या यह नीति और विधि के विरुद्ध है? मेरा विश्वास है कि विधि नीति को पदाक्रांत करने के लिए

नहीं, उसका संरक्षण करने के लिए होती है। यही उसका उद्देश्य होना चाहिए।"

डॉक्टरजी के मुकदमे में न्यायालय में लोगों की भीड़ लग जाती थी। इसके पूर्व जिन लोगों पर मुकदमे हुए थे, उन्होंने अपना बचाव करने से इनकार कर दिया था। अत: उन मुकदमों में 'सजा' के अतिरिक्त और कुछ सुनने के लायक नहीं था, परंतु डॉक्टरजी ने सरकार की अपात्रता तथा असहयोग के उद्देश्य, जनसभाओं के समान ही न्यायालय में भी स्पष्ट रूप से बताने की नीति स्वीकार की थी। लोगों द्वारा इस प्रकार एकत्र होकर उनके भाषणों को बड़ी उत्सुकता से सुनना ही उनकी इस नीति की यथार्थता का प्रमाण है। डॉक्टरजी ने इस प्रकार मैदान की सभा की धूम न्यायालय में भी उत्पन्न कर दी।

डॉक्टरजी के अपनी भूमिका को स्पष्ट करनेवाले इस वक्तव्य के उपरांत सरकारी वकील ने इन थोड़े से शब्दों में उस पर टीका की, "....डॉक्टर हेडगेवार ने अभी जो भाषण किया है, वह अत्यंत सीधा-सादा है, परंतु उनकी सभा में भाषण पद्धति इससे भिन्न होनी चाहिए। प्रतिवृत्त लेनेवालों को गलतफहमी होने का कोई कारण नहीं दिखता। सरकारी वकील के अनुसार इस भाषण के सरल होने का प्रमाणपत्र मिल चुका था। फिर उनके सभाओं के भाषण कैसे होते होंगे, इसकी कल्पना की जा सकती है।"

दिनांक 19 अगस्त को डॉक्टरजी के ऊपर धारा 108 के अंतर्गत जमानत के मुकदमे का फैसला होनेवाला था, इसलिए न्यायालय में लोगों की भारी भीड़ जमा हो गई थी। दोपहर साढ़े बारह बजे श्री स्मेली ने निर्णय दिया, "आपके भाषण राजद्रोहपूर्ण हैं। अत: एक वर्ष तक आप राजद्रोही भाषण नहीं करेंगे, इसका अभिवचन देते हुए एक-एक हजार की दो जमानतें तथा एक हजार रुपए का मुचलका लिखकर दें।" यह निर्णय होते ही डॉक्टरजी इस संबंध में अपना मनोगत व्यक्त करते हुए बोले, "आप कुछ भी निर्णय दीजिए। मैं निर्दोष हूँ, इस संबंध में मेरी आत्मा मुझे बता रही है। सरकार की दुष्ट नीति के कारण पहले ही जलती आग में यह दमननीति तेल का काम कर रही है। विदेशी राज्यसत्ता को अपने पाप के प्रायश्चित्त का अवसर शीघ्र ही आएगा, ऐसा मुझे विश्वास है। सर्वसाक्षी परमेश्वर के न्याय पर मुझे पूरा भरोसा है। अत: मुझसे माँगी हुई जमानत देना मुझे स्वीकार नहीं।"

एक वर्ष का कठोर कारावास

''डॉक्टरजी का कथन पूरा होते ही श्री स्मेली ने उन्हें एक वर्ष सश्रम कारावास के दंड की घोषणा की। उस समय डॉक्टरजी ने हँसते हुए दंड का

स्वागत किया तथा पुलिस अधिकारियों की सूचना के अनुसार कारागृह जाने के लिए बाहर आए। बाहर आते ही उनके चारों ओर मित्रों और जनता की भीड़ इकट्ठी हो गई तथा नगर-कांग्रेस की ओर से श्री गोखले ने माला पहनाई। तदुपरांत सर्वश्री विश्वनाथराव केलकर, दामूपंत देशमुख, हरकरे तथा अन्य जनों ने भी पुष्पमालाएँ समर्पण कर उनका जय-जयकार किया। ताँगे में बैठने के पूर्व रामपायली से आए हुए आबाजी हेडगेवार, बड़े भाई श्री सीतारामजी तथा डॉ. मुंजे को डॉक्टरजी ने प्रणाम किया तथा बै. मोरूभाऊ अभ्यंकर, समीमुल्ला खाँ, श्री अलेकर, वैद्य, मंडलेकर, हरकरे आदि मित्रों से मिलकर एकत्र जनता को छोटा सा भाषण देकर विदाई ली। वे बोले, "राजद्रोह के इस मुकदमे में मैंने बचाव किया था। आजकल बहुतों की ऐसी धारणा हो गई है कि जो बचाव करेगा, वह देशद्रोही है। परंतु आप इतने लोग यहाँ इस समय इकट्ठा हैं, इससे यह पता चलता है कि कम-से-कम आपकी तो यह धारणा नहीं है। अपने ऊपर मुकदमा होने के बाद अपना बचाव न करते हुए खटमल के समान रगड़े जाना मुझे योग्य नहीं लगता। हमें प्रतिपक्ष की नीचता जगत् को अवश्य दिखा देनी चाहिए। इसमें भी देशसेवा है। उलटे बचाव न करना आत्मघातक है। आपको पसंद न हो तो बचाव मत कीजिए, पर बचाव करनेवालों को कम योग्यता का समझना भूल होगी। देशकार्य करते हुए जेल तो क्या कालेपानी जाने अथवा फाँसी के तख्ते पर लटकने को भी हमें तैयार रहना चाहिए, परंतु जेल में जाना मानो स्वर्ग है, वही स्वातंत्र्य-प्राप्ति है, इस प्रकार का भ्रम लेकर मत चलिए। केवल जेल भरने से अपने को स्वतंत्रता अथवा स्वराज्य मिलेगा, ऐसा भी मत समझिए। जेल में न जाते हुए बाहर भी बहुत सा देश का काम किया जा सकता है, इसको ध्यान में रखिए। मैं एक वर्ष में वापस आऊँगा। तब तक देश के हालचाल का मुझे पता नहीं लगेगा, परंतु हिंदुस्थान को पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त कराने का आंदोलन शुरू होगा, ऐसा मुझे विश्वास है। हिंदुस्थान को अब विदेशी सत्ता के अधीन रहना नहीं है। उसे अब गुलामी में नहीं रखा जा सकेगा। आप सबका हृदय से आभार मानकर आपसे एक वर्ष के लिए आज्ञा लेता हूँ।" ऐसा कहते हुए डॉक्टरजी ने हाथ जोड़कर सबको नमस्कार किया। तालियों की गड़गड़ाहट के बीच 'वंदे मातरम्' की घोषणा हुई।"

जनसभाओं में अभिनंदन

कांग्रेस के राष्ट्रवादी नेताओं, अपने पूर्व के क्रांतिकारी साथियों तथा समर्थकों की अपार भीड़ द्वारा लगाए गए 'भारत माता की जय'-'वंदे मातरम्' के गगनभेदी

उद्घोषों के बीच डॉ. हेडगेवार 19 अगस्त, 1921 को नागपुर की जेल में पहुँच गए। उसी दिन सायं काल को एक अभिनंदन सभा का आयोजन करके अनेक नेताओं ने अत्यंत ह्रदयस्पर्शी भाषण देकर डॉक्टरजी के साहस एवं निडरता की खुले मन से तारीफ की। इन नेताओं में डॉ. मुंजे, नारायण राव अलेकर, श्री हरकरे तथा विश्वनाथराव केलकर शामिल थे। इन सभी नेताओं ने डॉ. हेडगेवार की पूर्ण स्वतंत्रता पर निष्ठा की मुक्त कंठ से प्रसंशा की तथा लोगों को इस पथ पर आगे बढ़कर संघर्ष करने की अपील भी की।

डॉक्टरजी के अभिन्न निकटवर्ती मित्र तथा साप्ताहिक 'महाराष्ट्र' के मुख्य संपादक गोपाल राव ओगले ने 24 अगस्त, 1921 के अंक के संपादकीय 'डॉ. जेल क्यों गए?' में लिखा था—"डॉ. हेडगेवार अपने सद्विवेक के विरुद्ध जेल गए। वह जेल जाने से डर गए, इस प्रकार का जनापवाद न आए, इसीलिए उन्हें जेल में जाना आवश्यक प्रतीत हुआ। जानबूझकर कारावास स्वीकार करनेवाले डॉ. हेडगेवार कारावास के स्वार्थत्याग से खरे एवं अधिक प्रदीप्त हैं। नागपुर की दयोन्मुख पीढ़ी का नेतृत्व करने एवं अपने विशुद्ध स्वातंत्र्य के ध्येय का प्रतिपादन करने के लिए शीघ्र ही, एक वर्ष के बाद जेल से वापस आएँगे, ऐसी हमें आशा है। सश्रम कारावास की सजा नागपुर समेत पूरे मध्य प्रांत में आग की तरह फैलती गई। अनेक स्थानों पर विशेष सभाओं का आयोजन होने लगा। डॉक्टरजी का अभिनंदन, सरकार की निंदा, बहिष्कार इत्यादि कार्यक्रम असहयोग आंदोलन का एक महत्त्वपूर्ण भाग बनते गए। जिस तरह डॉ. हेडगेवार के भाषणों से असहयोग आंदोलन को बल मिला था, ठीक उसी तरह का उत्साह उनकी सजा से भी चारों ओर फैल गया।"

कारावास में भी वीरव्रती जीवन

हिंदू धर्म के सिद्धांतों और अधिकांश रीति-रिवाजों में डॉ. हेडगेवार पूर्ण निष्ठा रखते हुए अपनी दिनचर्या का निर्वाह करते थे। वे यज्ञोपवीत पहनते थे, परंतु जेल के नियमों के अनुसार जब उन्हें इसे उतारने के लिए कहा गया तो उन्होंने ऐसा करने से साफ इनकार कर दिया। 'मैं इसे नहीं उतार सकता, यह मेरा धार्मिक हक है। इसमें दखलअंदाजी करने का आपका कोई अधिकार नहीं बनता।' उस समय जेल के पर्यवेक्षक एक आयरिश सज्जन थे। उन्होंने डॉक्टरजी की हिम्मत और दृढ निश्चय को देखकर यज्ञोपवीत पहने रहने की इजाजत दे दी। डॉक्टरजी के इस बगावती रुख का असर जेल में मौजूद अन्य सत्याग्रहियों पर भी पड़ा। सभी ने एक आवाज से जेल के मैनुअल के मुताबिक सुविधाओं के लिए संघर्ष छेड़ दिया। अंततः सभी

सत्याग्रहियों को राजनीतिक कैदी की मान्यता प्राप्त हो गई।

डॉक्टरजी के साथ असहयोग आंदोलन में सहयोग करनेवाले उनके कई साथी इसी जेल में पहुँच गए। बापूजी पाठक, रघुनाथ रामचंद्र, पं. राधामोहन गोकुल तथा बापूराव हरकरे इत्यादि। राष्ट्रवादी कांग्रेसी नेताओं के साथ एक 20-22 वर्ष का मुसलिम युवक काजी इनामुल्ला भी था, जो 'खिलाफत-आंदोलन' में शिरकत करके एक वर्ष की कठोर सजा भुगतने के लिए आया था। इस कट्टरपंथी युवा विद्यार्थी द्वारा प्रातः शीघ्र उठकर जोर-जोर से कुरान की आयतें पढ़ने से शेष राजनीतिक कैदियों की मीठी-मीठी नींद में खलल पड़ने लगा। जब सबके समझाने पर वह नहीं माना तो पंडित राधामोहन ने उससे भी ज्यादा ऊँचे स्वर में रामचरितमानस की चौपाइयाँ पढ़नी शुरू कर दीं। पंडितजी की ऊँची गलाफाड़ आवाज से इनामुल्ला खान को अपनी ही आयतें सुनना कठिन हो गया। तब कहीं जाकर वह शांत हुआ। इस मुसलिम युवक की हठधर्मिता पर डॉक्टरजी मंद-मंद मुसकराते रहते थे। वह भी डॉक्टरजी का मुरीद बन गया।

साथियों को दिए देशसेवा के संस्कार

इन सभी राजनीतिक कैदियों को जेल में कई प्रकार के काम दिए गए। रस्सी बनाने, दाल पीसने इत्यादि कामों के साथ पुस्तकों पर जिल्द चढ़ाने जैसे काम करवाए जाते थे। डॉक्टरजी को जिल्दों पर कागज चिपकाने और लुगदी बनाने का काम दिया गया, जिससे उनके हाथों में छाले पड़ गए। इस प्रकार के सभी कष्टों एवं यातनाओं को वे पूरी मस्ती के साथ झेलते रहे। इस सजा को वे स्वतंत्रता सेनानी का सिलेबस मानते थे, जिसे पूरा किए बिना परीक्षा में उत्तीर्ण होना कठिन था। डॉक्टरजी मध्यप्रांत कांग्रेस की प्रांतीय समिति के जिम्मेदार सदस्य थे, अतः सम्माननीय सत्याग्रही नेता होते हुए उन्हें छोटे-मोटे झगड़े नापसंद थे। जेल में मिले काम को भी वे पूरी तन्मयता के साथ पूरा करते रहे। काम करते हुए भी वे अन्य कैदियों के साथ स्वाधीनता, स्वधर्म तथा सत्याग्रह आदि विषयों पर चर्चा करते हुए सबका राजनीतिक प्रशिक्षण भी करते जाते थे। यहाँ ध्यानयोग्य बात है कि वे अपने साथियों को सशस्त्र क्रांति का महत्त्व समझाना भी नहीं भूलते थे। अपने पूर्व के वीरव्रती जीवन की कथाएँ सुनाकर वे सभी सत्याग्रहियों को निडर देशभक्त बनने की ट्रेनिंग दे रहे थे।

डॉक्टरजी की सलाह एवं प्रेरणा से सभी सत्याग्रहियों ने 13 अप्रैल को 'जलियाँवाला बाग दिवस' मनाने का फैसला किया। जब सभी ने उस दिन हड़ताल करके कोई भी काम न करने का मन बनाया तो इमानुल्ला खान नहीं माना। वह

24 घंटे खिलाफत-खिलाफत ही चिल्लाता रहता था। अन्य किसी उत्सव अथवा सामूहिक गतिविधि में उसकी जरा भी रुचि नहीं थी, परंतु डॉक्टरजी का कहना मानकर वह भी हड़ताल में शामिल हो गया। जेल के नियमों के अनुसार राजनीतिक तथा गैर-राजनीतिक कैदियों को एक जैसा भोजन और कपड़े दिए जाते थे, परंतु बाद में अमर शहीद यतींद्र नाथ के 60 दिन के अनशन के बाद राजनीतिकों का एक अलग वर्ग बना दिया गया। जेल में रहते हुए भी डॉक्टरजी ने अपने मैत्रीपूर्ण व्यवहार से न केवल राजनीतिक एवं गैर-राजनीतिक कैदियों को प्रभावित किया अपितु नए जेल-अधिकारी नीलकंठ राव जठार से भी प्रेमपूर्ण संबंध बना लिये। जठार ने स्वयं माना था कि डॉक्टरजी के जेल से छूटने के बाद उनके प्रेमपूर्ण व्यवहार के कारण हम सरकारी नौकर होते हुए भी उनसे मिलने उनके घर जाते थे।

स्वागत समारोहों में वही जज्बा

डॉ. हेडगेवार की जेल से छुट्टी 12 जुलाई, 1922 को होने के बाद उनके वजन में पच्चीस पौंड की वृद्धि हुई। वृद्धि से पता चलता है कि प्रत्येक परिस्थिति में प्रसन्न रहते हुए अपने ध्येय-पथ पर निरंतर बढ़ते रहना उनका स्वभाव था। कारावास से बाहर निकलते ही उनका वंदे मातरम् के उद्‍घोष और पुष्पवर्षा से स्वागत करनेवालों में डॉ. मुंजे, डॉ. परांजपे, ना.भा. खरे इत्यादि प्रमुख राजनीतिक एवं सामाजिक नेता शामिल थे। उनके घर के रास्ते में अनेक स्थानों पर स्वागत द्वारों की सजावट की गई। रात्रि को कई जगहों पर दीपमाला की गई। नागपुर से प्रकाशित महाराष्ट्र साप्ताहिक पत्र ने लिखा था—"डॉ. हेडगेवार की देशभक्ति, निस्स्वार्थवृत्त तथा उत्कटता के संबंध में किसी के भी मन में शंका नहीं थी, परंतु यह सब गुण स्वार्थत्याग की भट्ठी में से निखरकर बाहर आ रहे थे। उनके इन गुणों का इसके आगे राष्ट्रकार्यों के लिए सौ गुना उपयोग हो, यही हमारी कामना है।"

नागपुर के चिटणीस पार्क में सायंकाल स्वागत सभा का आयोजन किया गया, परंतु भारी वर्षा की वजह से यह कार्यक्रम 'व्यंकटेश नाट्यगृह' में संपन्न किया गया। स्वागत सभा के प्रधान डॉ. ना.भा. खरे के स्वागत प्रस्ताव का सर्वसम्मत अनुमोदन होने के पश्चात् पंडित मोतीलाल नेहरू तथा हकीम अजमल खाँ, डॉ. अंसारी, श्री राजगोपालाचारी इत्यादि नेताओं ने भी डॉक्टरजी का स्वागत किया। सभा के अंत में डॉक्टरजी ने बहुत थोड़े से नपे-तुले शब्दों में अपनी सारगर्भित बात रखी—"देश के सम्मुख अपना ध्येय सबसे उत्तम एवं श्रेष्ठ ही रखना चाहिए। पूर्ण स्वतंत्रता से कम कोई भी लक्ष्य अपने सामने रखना उपयुक्त नहीं होगा। मार्ग कौन सा हो, इस

विषय में इतिहासवेत्ता श्रोताओं को कुछ भी करना उनका अपमान करना ही होगा। स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करते हुए यदि मृत्यु भी आई तो उसकी चिंता नहीं करनी चाहिए। यह संघर्ष उच्च ध्येय पर दृष्टि तथा दिमाग ठंडा रखकर ही चलाना होगा।"

एक वर्ष की कठोर सजा भोगने के बाद डॉक्टरजी शारीरिक दृष्टि से तो आजाद हो चुके थे, पर उनका मन अनेक प्रकार की चिंताओं तथा योजनाओं से मुक्त नहीं हो सका। अंग्रेजों के पाश से भारतमाता को स्वतंत्र करवाने के लिए अब क्या किया जा सकता है। यही गंभीर चिंता डॉक्टरजी को परेशान कर रही थी। बालपन से लेकर अब तक स्वतंत्रता संग्राम के कई मोर्चों पर सफलता से लड़ते हुए अब यह सेनापति अगले मोर्चे पर संघर्ष के लिए तैयार हो गया। कारावास में एक वर्ष तक किया गया विचार-मंथन उनके भविष्य में होनेवाले गंभीर चिंतन का आधार बना।

□